# इकाई 24 विदेशी पूँजी एवं बहुराष्ट्रीय निगम

**इकाई की रूपरेखा**


24.0 उद्देश्य

24.1 प्रस्तावना

24.2 पूँजी अंतरण एवं आर्थिक विकास

- 24.2.1 विदेशी पूँजी की भूमिका
- 24.2.2 विदेशी पूँजी के संघटक

24.3 बहु-राष्ट्रीय निगम

- 24.3.1 बहु-राष्ट्रीय निगमों की विशेषताएँ
- 24.3.2 बहु-राष्ट्रीय निगमों का महत्त्व
- 24.3.3 बहु-राष्ट्रीय निगमों के पक्ष में तर्क
- 24.3.4 बहु-राष्ट्रीय निगमों के विपक्ष में तर्क
- 24.3.5 बहु-राष्ट्रीय निगमों का नियमन

24.4 भारत में विदेशी पूँजी

- 24.4.1 विदेशी पूँजी के प्रति सरकारी नीति

24.5 नई आर्थिक नीति एवं 1991–99 के दौरान नीतिगत परिवर्तन

- 25.5.1 नई नीति का आलोचनात्मक मूल्यांकन

24.6 सारांश

24.7 शब्दावली

24.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

24.9 बोध प्रश्नों के उत्तर अथवा दिशा-संकेत


## 24.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप इस योग्य हो सकेंगे कि :

- आर्थिक विकास में विदेशी पूँजी की भूमिका की चर्चा कर सकें;
- विदेशी पूँजी के संघटकों की पहचान कर सकें;
- बहु-राष्ट्रीय निगमों की विशेषताएँ बतला पाएँ;
- भारत में काम कर रही कुछ प्रमुख बहु-राष्ट्रीय निगमों और उनके उत्पादों की पहचान कर सकेंगे;
- विकासशील अर्थव्यवस्था में बहु-राष्ट्रीय निगमों के विपक्ष में तर्क प्रस्तुत कर सकें;
- भारत में विदेशी पूँजी के प्रति उदार नीति की आवश्यकता पर प्रकाश डाल सकें; तथा
- उदार नीति के प्रति घरेलू उपक्रमियों की प्रतिक्रिया की समीक्षा कर सकें।

## 24.1 प्रस्तावना

एक विकासशील अर्थव्यवस्था के आर्थिक विकास के आरंभिक चरण में विदेशी पूँजी के अंतर्वाह का बहुत महत्त्व है। आधुनिक आर्थिक विकास इतिहास में बहुत से ऐसे देश मिल जाएँगे जिन्होंने औद्योगिक रूप से अधिक उन्नत राष्ट्रों से विदेशी पूँजी प्राप्त करके अपना आर्थिक विकास किया है। आइए इस संदर्भ में हम भारत के अनुभवों की समीक्षा करें।

# 24.2 पूँजी अंतरण एवं आर्थिक विकास

## 24.2.1 विदेशी पूँजी की भूमिका

एक विकासशील अर्थव्यवस्था में विदेशी पूँजी की भूमिका निम्न के संदर्भ में आँकी जा सकती है :

**1) बचत अंतराल (Saving Gap)**

आर्थिक विकास के वास्ते पूँजी निर्माण की दर बढ़ाने की आवश्यकता होती है। पूँजी निर्माण की दर बढ़ाने के लिए निवेश के स्तर में वृद्धि करनी होती है। अल्पविकसित देशों में बचत के अभाव में निवेश की मात्रा को नहीं बढ़ाया जा सकता। अल्प बचत निम्न आय स्तर, धीमी विकास की दर एवं उपभोग की बढ़ती आवश्यकताओं का संयुक्त परिणाम होती है। अपेक्षित निवेश के स्तर में जब घरेलू बचतें कम होती हैं तो इस अंतराल को विदेशी पूँजी की सहायता से पूरा किया जा सकता है।

हम इस बात को अंकगणित की सहायता से सहज ही समझ सकते हैं। राष्ट्रीय आय लेखा की मौलिक धारणा को निम्न रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है :

$Y=C+I+(X-M)$ ..... (1)

जहाँ,

Y = सकल राष्ट्रीय उत्पाद

C = समग्र उपभोग व्यय

I = निवेश व्यय

X = वस्तुओं एवं सेवाओं के निर्यात तथा शेष-विश्व से प्राप्त आय

M = वस्तुओं एवं सेनाओं के आयात तथा शेष-विश्व को भुगतान की गई आय

इन समस्त खर्चों से समानरूपी आय का सृजन होता है, कुल आय एवं कुल व्यय बराबर होते हैं। कुल आय के एक भाग को उपभोग पर खर्च कर दिया जाता है तथा शेष आय बचत का रूप धारण करती है। अर्थात्

$Y=C+S$ ..... (2)

चूँकि समग्र आय व समग्र व्यय बराबर होते हैं अतः समीकरण (1) और समीकरण (2) को निम्न रूप में भी व्यवस्थित किया जा सकता है :

$C+I+(X-M)=C+S$ ..... (3)

समीकरण (3) को पुनर्व्यवस्थित करने पर हमें निम्न परिणाम प्राप्त होता है :

$I=S+(M-X)$ ..... (4)

समीकरण (4) से स्पष्ट है कि किसी अर्थव्यवस्था में निवेश की मात्रा का निर्धारण उपलब्ध बचत के स्तर तथा विदेशों से पूँजी के शुद्ध अंतर्वाह (M-X) पर निर्भर करता है। इस अंतर्वाह से निवेश योग्य कोषों में वृद्धि हो जाती है। इससे विकासशील अर्थव्यवस्था दो रूपों में लाभांवित होती है।

पहला, इस अंतर्वाह से निवेश संबंधी निर्णय प्रभावित होते हैं। विकास के कुछ कार्यक्रम उन्हीं परिस्थितियों में अनुकूल परिणाम प्रस्तुत करते हैं जबकि उनके विभिन्न संघटकों में एक-साथ निवेश किया जाता है। विदेशी पूँजी की उपलब्धता इस प्रकार के निवेश सुलभ करवाती है।

दूसरा, जब विदेशी पूँजी की सहायता से बड़े आकार के विकास कार्यक्रम आरंभ किए जाते हैं तो इसके प्रभाव में रोज़गार और निवेश के अन्य अवसर सहज ही प्रकट हो जाते हैं। इन अवसरों का लाभ उठाने के लिए घरेलू उपक्रम और बचत भी आगे बढ़ते हैं। परिणामतः साधनों में समग्र वृद्धि कहीं अधिक हो पाती है।

2) **व्यापार अंतराल एवं विदेशी विनिमय अंतराल (Trade Gap and Foreign Exchange Gap)**

एक विकासशील अर्थव्यवस्था के समक्ष दो संरचनात्मक कठिनाइयाँ होती हैं: i) सकल राष्ट्रीय उत्पाद की वृद्धि दर को बनाए रखने के लिए आदानों की न्यूनतम आवश्यकताएँ, तथा ii) निर्यातों की एक ऊपरी सीमा जहाँ तक निर्यातों से प्राप्त आगम आवश्यक आयातों की आपूर्ति करने में अपर्याप्त होते हैं। ऐसी परिस्थिति में यदि इन सीमाओं को पार न किया जाए तो वास्तविक विकास दर घरेलू बचतों से अपेक्षित विकास दर से कम रहेगी। इन सीमाओं का प्रभाव निम्न परिस्थितियों में और अधिक गंभीर होगा :

क) यदि कुछ महत्त्वपूर्ण वस्तुएँ जैसे पूँजीगत उपकरण एवं तकनीकी जानकारी देश में उपलब्ध नहीं है और विदेशी स्रोतों से ही प्राप्त की जा सकती हैं, अथवा

ख) औद्योगीकरण के लिए विदेशी साधन घरेलू साधनों के ही इस प्रकार पूरक हैं कि विदेशी साधनों के अभाव में घरेलू साधन भी अप्रयुक्त रहते हैं।

उपरोक्त परिस्थितियों में विदेशी पूँजी की उपलब्धता के परिणामस्वरूप राष्ट्र के समक्ष विकास क्रम में प्रयुक्त होने वाले साधनों की मात्रा में वृद्धि हो जाती है और अर्थव्यवस्था तेज गति से विकास के मार्ग पर बढ़ सकती है।

3) **तकनीकी एवं प्रबंधीयक अंतराल (Technical and Managerial Gap)**

तीव्र आर्थिक विकास के वास्ते आधुनिक तकनीकी व प्रबंधकीय क्रियाओं की अवहेलना नहीं की जा सकती। विकासशील अर्थव्यवस्था में ये अंतराल इस कारण उत्पन्न होते हैं कि यहाँ विकसित देशों की तुलना में तकनीकी विकास का स्तर बहुत नीचा होता है।

विदेशी पूँजी का कार्य उपरोक्त तीन अंतरालों को भरना होता है ताकि तीव्र विकास के लिए उपयुक्त वातावरण तैयार हो सके।

## 24.2.2 विदेशी पूँजी के संघटक

विदेशी पूँजी का अंतर्वाह दो रूपों में हो सकता है : (क) विदेशी सहायता, तथा (ख) निजी विदेशी निवेश।

विदेशी सहायता (Foreign aid) में विदेशी सरकार तथा संस्थाओं से प्राप्त ऋणों एवं अनुदानों को सम्मिलित किया जाता है। विदेशी ऋणों में सबसे बड़ी कठिनाई इनके पुनर्भुगतान की होती है।

विदेशी पूँजी के रूप में निजी विदेशी निवेश (Private Foreign Investment) का विशेष महत्त्व

होता है हालाँकि अर्थशास्त्रियों में इस बारे में मतभेद हैं कि क्या यह आर्थिक विकास के लिए हितकर होती है अथवा अहितकर। जो अर्थशास्त्री इसके प्रतिकूल प्रभावों की ओर ज्यादा ध्यान रखते हैं वे ये तर्क दिया करते हैं कि ऐसा निवेश पूँजी गहन होता है, अनुचित तकनीकी का प्रयोग करता है तथा देश में आय-वितरण को दूषित करता है। इनका यह भी तर्क है कि विदेशी निवेश के भुगतान-शेष पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ते हैं।

इसके विपरीत विदेशी पूँजी के समर्थकों का यह दावा है कि इसके सहयोग से तकनीकी विकास, प्रबंधकीय जानकारी का विकास, निर्यातों में वृद्धि तथा विकास-दर की गति में तेजी लाना संभव हो पाता है। जहाँ ऋणों के कारण ऋण-सेवा का बोझ तथा ऋणों के पुनर्भुगतान की जिम्मेदारी बनी रहती है, निवेश के रूप में प्राप्त पूँजी मात्र लाभांश की हकदार होती है। लाभांश प्राप्त करने की आवश्यक शर्त है कि पूँजी का लाभप्रद और उत्पादक क्षेत्रों में निवेश किया जाए जबकि ऋणों के साथ ऐसी बाध्यता नहीं होती।

निजी पूँजी निवेश के दो प्रमुख स्रोत निम्नलिखित हैं :

1) विदेशी प्रत्यक्ष निवेश (Foreign Direct Investment) यह निम्न में से किसी भी रूप में हो सकते हैं: (i) विदेशी कम्पनियों की ब्रांचों द्वारा निवेश, (ii) विदेशी कम्पनियों की अनुशंगी कम्पनियों द्वारा निवेश, एवं (iii) विदेशी-नियंत्रण वाली कम्पनियों द्वारा निवेश।

2) पत्राधान निवेश (Portfolio Investment) जब विदेशी नागरिक भारतीय कम्पनियों के अंशपत्रों को खरीदते हैं और बदले में जिस पूँजी का अंतर्वाह होता है उसे पत्राधान निवेश कहते हैं।

वर्तमान में, निजी विदेशी पूँजी का निवेश विशेष रूप से बहु-राष्ट्रीय निगमों द्वारा किया जाता है। ये निगम पर्याप्त मात्रा में तकनीकी ज्ञान की व्यवस्था भी करते हैं। अब हम संगठन के इस रूप की प्रमुख विशेषताओं का वर्णन करेंगे।

**बोध प्रश्न 1**

1) एक विकासशील अर्थव्यवस्था में किन तीन अंतरालों की पूर्ति विदेशी पूँजी द्वारा की जाती है?

.....

.....

.....

.....

.....

2) विकासशील अर्थव्यवस्था में विदेशी पूँजी की आवश्यकता की समीक्षा कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

## 24.3 बहु-राष्ट्रीय निगम

बहु-राष्ट्रीय निगम से आशय उस उद्यम से है जो कि प्रत्यक्ष विदेशी निवेश को स्वीकार करता है अर्थात् जो एक से अधिक देशों में आय सृजित करने वाली परिसम्पत्तियों पर स्वामित्व या नियंत्रण रखता है अथवा जो अंतरराष्ट्रीय उत्पादन में संलग्न होता है।

### 24.4.1 बहु-राष्ट्रीय निगम की विशेषताएँ

बहु-राष्ट्रीय निगम में अनेक विशेषताएँ विद्यमान होती हैं जिनमें कुछ प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं :

i) **बड़ा आकार (Giant Size)** : बहु-राष्ट्रीय निगमों की परिसम्पत्तियों का मूल्य खरबों डालरों में होता है और इनको असाधारण लाभ प्राप्त होते हैं। उदाहरण के लिए विश्व की सबसे बड़ी बहु-राष्ट्रीय निगम, रॉयल डच्य शेल, की विदेशी परिसम्पत्तियों का मूल्य $69 बिलियन आँका गया है जोकि पाकिस्तान ($40 बिलियन), नाइजीरिया ($34 बिलियन), या फिलीपीन्स ($45 बिलियन) जैसे देशों के सकल घरेलू उत्पाद से भी ज्यादा है।

ii) **अंतरराष्ट्रीय कार्यविधि (International Operation)** : इस प्रकार के निगम का नियंत्रण एक ही संस्था में होता है, लेकिन इसकी गतिविधियाँ एक से अधिक देशों में फैली हुई होती हैं। बहु-राष्ट्रीय निगम का मूल संगठन एक देश में होता है, जबकि इसकी शाखाएँ कई देशों में फैली होती हैं। प्रत्येक शाखा अपने जनक संगठन के लिए कार्य करती है और इसके लिए यह स्थानीय पूँजी या प्रबंध पर निर्भर नहीं रहती। शाखाओं के ऊपर विदेशी जनक कम्पनी का पूर्ण नियंत्रण होता है। विदेशी नियंत्रण की मात्रा 51 प्रतिशत से लेकर 100 प्रतिशत हो सकती है। इस प्रकार, बहु-राष्ट्रीय निगम में स्वामित्व एवं नियंत्रण के बीच समन्वय स्थापित किया जाता है।

iii) **अल्पाधिकारी ढाँचा (Oligopolistic Structure)** : संविलियन एवं नियंत्रण की प्रक्रिया की सहायता से कुछ ही समय में बहु-राष्ट्रीय निगम की शक्ति बहुत अधिक हो जाती है। शक्ति के केंद्रीयकरण और बड़ा आकार मिलकर एक बहु-राष्ट्रीय निगम की शक्ति बहुत अधिक हो जाती है। शक्ति के केंद्रीयकरण और बड़ा आकार मिलकर एक बहु-राष्ट्रीय निगम को अल्पाधिकारी स्वरूप प्रदान करते हैं।

iv) **स्वाभाविक उद्‌गम (Spontaneous Evolution)** : बहु-राष्ट्रीय निगम सामान्यतया स्वाभाविक रूप से विकसित होते हैं, इसके लिए पूर्वायोजन की आवश्यकता नहीं होती। इसका प्रायः शनैः-शनैः विकास होता है। बहुत-सी फर्में समय के साथ अंतरराष्ट्रीय रूप धारण कर लेती हैं। कई बार मजदूरी-दरों मे भेद होने अथवा अच्छी व्यापारिक दशाओं को देखते हुए बहु-राष्ट्रीय निगम कई देशों में अपनी शाखाओं की स्थापना करते हैं।

v) **संसाधनों का सामूहिक स्थानांतरण (Collective Transfer of Resources)** : एक बहु-राष्ट्रीय निगम संसाधनों के बहु-पक्षीय स्थानांतरण को संभव बनाता है। इस प्रकार के स्थानांतरण में तकनीकी ज्ञान, मशीनरी, कच्चा माल, प्रबंधकीय सेवाएँ आदि शामिल की जाती हैं। एक बहु-राष्ट्रीय निगम के पास आधुनिकतम तकनीकों, विपणन प्रणालियों, प्रबंध एवं कुशील वित्तीय व्यवस्था आदि का एक अद्‌भुत सम्मिश्रण होता है।

### 24.3.2 बहु-राष्ट्रीय निगमों का महत्त्व

बहु-राष्ट्रीय निगम का विश्व की आर्थिक प्रणालियों पर क्रांतिकारी प्रभाव पड़ता है। इसका कारण यह है कि बहु-राष्ट्रीय निगम के अंतरराष्ट्रीय सौदों का प्रभाव कई देशों के परम्परागत पूँजी-प्रवाह और अंतरराष्ट्रीय व्यापार पर पड़ता है। आजकल विश्व की अर्थव्यवस्था में इनका महत्त्वपूर्ण स्थान है।

### 24.3.3 बहु-राष्ट्रीय निगमों के पक्ष में तर्क

बहु-राष्ट्रीय निगम के कार्य-संचालन के कारण बहुत से लाभ उत्पन्न होते हैं। प्रायः यह कहा जाता कि बहु-राष्ट्रीय निगमों के प्रमुख लाभ निम्नलिखित हैं :

i) अल्पविकसित देशों में तकनीकी ज्ञान का अभाव होता है। इन देशों में शोध एवं विकास के लिए आवश्यक साधनों की कमी होती हैं। इनके द्वारा उत्कृष्ट कोटि की तकनीक प्रदान की जाती है। इनके द्वारा अल्पविकसित देशों को विकसित तकनीक, उत्कृष्ट उत्पादन की विधियाँ तथा परिष्कृत क्षमता आदि उपलब्ध हो पाती हैं।

ii) बहु-राष्ट्रीय निगम अल्पविकसित देशों को विकसित देशों से पूँजी की व्यवस्था करने में सहायता देते हैं। इस प्रकार, ये अतिरेक पूँजी वाले देशों का कम पूँजी वाले देशों की ओर स्थानांतरित करते हैं।

iii) अल्पविकसित देशों का अन्य देशों के साथ सम्पर्क नहीं होता। बहु-राष्ट्रीय निगम अतिथेय देश में संयोजन प्रभाव को उत्पन्न करते हैं। ये निगम संयोजित उद्योगों के विकास में भी सहयोग देते हैं। यह संयोजन आगे की ओर अथवा पीछे की ओर हो सकता है।

iv) बहु-राष्ट्रीय निगम ज्ञान के आधार को विकसित करने में मदद करते हैं। इनकी सहायता से मानवीय संसाधनों का विकास होता है। ये ज्ञान एवं अनुभव को एक देश से दूसरे देश में ले जाते हैं।

v) बहु-राष्ट्रीय निगमों की कार्यविधियों का अतिथेय देश के भुगतान-शेष पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है। इनके पास विश्वव्यापी बाज़ार उपलब्ध होता है जिसकी सहायता से ये विकासशील देशों के निर्यातों में वृद्धि कर सकते हैं।

vi) बहु-राष्ट्रीय निगम अतिथेय देशों में अपनी शाखाएँ स्थापित करके बड़ी मात्रा में रोज़गार के अवसरों का निर्माण करते हैं। ये दो प्रकार से रोज़गार का सृजन करते हैं। पहला, निगम में वृद्धि करके, तथा दूसरा, तकनीकी ज्ञान का विकास करके। बहु-राष्ट्रीय निगम अल्पविकसित देशों में निवेश की दर को ऊँचा उठाने में भी सहायता प्रदान करते हैं।

### 24.3.4 बहु-राष्ट्रीय निगमों के विपक्ष में तर्क

**पहला,** बहु-राष्ट्रीय निगम प्रायः लाभ के उद्देश्य को ध्यान में रखकर ही कार्य करते हैं। ये अतिथेय देश के सर्वांगीण विकास में रुचि नहीं लेते। ये अपने लाभों को अधिकतम बनाने के लिए कोई भी अनुचित या अनैतिक कदम उठा सकते हैं।

**दूसरा,** बहु-राष्ट्रीय निगम जो तकनीक लाते हैं वह पूँजी गहन होती है। यह तकनीकी विकसित देशों के लिए श्रयेस्कर होती है। ये अतिथेय देश की आवश्यकताओं, परिस्थितियों और वातावरण को ध्यान में रखकर उचित तकनीक का चयन करने के लिए कोई प्रयत्न नहीं करते।

**तीसरा,** तकनीकी का स्थानांतरण बहुत खर्चीला सिद्ध होता है। बहु-राष्ट्रीय निगम तकनीक प्रदान करने के लिए अत्यधिक फीस, रायल्टी तथा अन्य लागतें वसूल करते हैं।

**चौथा,** बहु-राष्ट्रीय निगम क्षेत्रीय असमानताओं को उत्पन्न करते हैं। ये अल्पविकास के महासागर में समृद्धि एवं विकास का केवल टापू निर्मित करने में ही सफल होते हैं।

**पाँचवाँ,** बहु-राष्ट्रीय निगमों की उपस्थिति एक देश के दीर्घकालीन औद्योगिक विकास में बाधा प्रस्तुत करती है। बहु-राष्ट्रीय निगमों के क्रिया-कलापों के कारण स्थानीय निगम क्रियाशील है तो उसकी प्रतियोगिता में स्थानीय फर्में टिक नहीं पाती हैं।

**छठा,** यद्यपि बहु-राष्ट्रीय निगमों का विकासशील देशों के तकनीकी विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान हो सकता है लेकिन व्यवहार में इनकी निष्पादनता संतोषप्रद नहीं रही है। वैज्ञानिक शोध में इनका योगदान बहुत नगण्य रहा है।

**सातवाँ,** बहु-राष्ट्रीय अपनी व्यापारिक क्रियाओं में भ्रष्ट एवं अनुचित विधियों को अपनाते हैं। संयुक्त राष्ट्र की एक रिपोर्ट में ऐसी ही भ्रष्ट विधियों पर प्रकाश डाला गया है। अंतरराष्ट्रीय सौदों में की जाने वाली भ्रष्ट कार्यविधियों में अनुचित प्रतिस्पर्धा तथा नियंत्रित व्यवहार विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इसके अंतर्गत कीमतों को उच्चे पर निर्धारित करना, कीमत विभेद, तथा बाज़ार संबंधी अनेक विकृतियाँ शामिल हैं।

**अंततः,** बहु-राष्ट्रीय निगम सामान्य आवश्यकता की वस्तुओं के स्थान पर विलासिता-संबंधी अनावश्यक कम उपयोगी वस्तुओं का उत्पादन करते हैं।

### 24.3.5 बहु-राष्ट्रीय निगमों का नियमन

अधिकांश विकासशील देश इस बात को अनुभव करने लगे हैं कि बहु-राष्ट्रीय निगमों की उपस्थिति से स्थानीय साधनों का कुशलता से उपयोग किया जा सकता है, लेकिन उनकी उपस्थिति से देश की क्रियाओं पर नियंत्रण लगाए जाने लगे हैं। नियंत्रण निम्न रूप धारण कर सकते हैं :

**पहला,** राष्ट्रीयकरण के भय से बहु-राष्ट्रीय के भय से बहु-राष्ट्रीय निगमों की क्रियाएँ नियंत्रित बनी रही हैं। यद्यपि राष्ट्रीयकरण को केवल असाधारण स्थिति में ही अपनाया जाना चाहिए, लेकिन इसका भय ही बहु-राष्ट्रीय निगमों को अनुशासनबद्ध कर देता है।

**दूसरा,** सरकार उन विशेष उद्योगों में सहयोग की स्वीकृति दे सकती है जहाँ पर बहु-राष्ट्रीय निगमों की लाभप्रद उपस्थिति हो सकती है।

**तीसरा,** बहु-राष्ट्रीय निगमों को विशेष समय अवधि तक निवेश के लिए स्वीकृति दी जा सकती है। इस प्रकार एक निश्चित समयावधि के उपरांत विदेशी कम्पनियों पर नियंत्रण लगाए जा सकते हों अथवा धीरे-धीरे उपनिवेश की नीति को अपनाया जा सकता है।

**चौथा,** सरकार बहु-कर प्रणाली को अपना सकती हैं तथा बहु-राष्ट्रीय निगमों पर ऊँची दर से कर लगाए जा सकते हैं।

**अंततः,** बहु-राष्ट्रीय निगमों को इस बात के लिए बाध्य किया जा सकता है कि अपने खोज, शोध व विकास का एक निश्चित भाग आतिथेय देश के लिए आरक्षित कर दें।

**बोध प्रश्न 2**

1) बहु-राष्ट्रीय निगम क्या है?

.....

.....

.....

.....

.....

2) बहु-राष्ट्रीय निगमों की चार प्रमुख विशेषताएँ बतलाएँ।

.....

.....

.....

.....

.....

3) बहु-राष्ट्रीय निगमों के चार प्रमुख लाभ बतलाएँ।

.....

.....

.....

.....

.....

4) बहु-राष्ट्रीय निगमों की चार प्रमुख कमियाँ बतलाएँ।

.....

.....

.....

.....

.....

## 24.4 भारत में विदेशी पूँजी

भारत की नियोजित अर्थव्यवस्था में विदेशी पूँजी को एक महत्त्वपूर्ण स्थान प्रदान किया जाता है। योजनाकाल के आरंभिक चरण में विदेशी पूँजी का प्रयोग घरेलू निवेश के सहायक के रूप में किया जाता था। विदेशी निवेशकर्ताओं को अनेक प्रकार की छूट ओर प्रोत्साहन दिए जाते थे। लेकिन बाद के वर्षों में भारतीय एवं विदेशी उपक्रमियों के बीच तकनीकी सहयोग के बारे में समझौते होने लगे। इधर पुनः पिछले कुछ वर्षों के दौरान विदेशी पूँजी के प्रति भारत के रवैये में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन आए हैं। भारतीय अर्थव्यवस्था में विदेशी पूँजी की मात्रा व भूमिका का विश्लेषण करने से पहले हम उपरोक्त संदर्भ में सरकार की नीति की विवेचना करेंगे।

### 24.4.1 विदेशी पूँजी के प्रति सरकारी नीति

भारत में विदेशी निवेशकर्ताओं को उन सभी औद्योगिक नीति प्रावधानों का अनुपालन तो करना ही होता है जोकि घरेलू निवेशकर्ता करते हैं साथ ही विदेशी सहयोग के नियमन के लिए सरकार द्वारा अलग से नियम और कानून बनाए गए हैं।

स्वतंत्र भारत में विदेशी पूँजी के प्रति अपने दृष्टिकोण को सरकार ने औद्योगिक नीति प्रस्ताव 1948 में स्पष्ट किया। इस प्रस्ताव में निजी विदेशी पूँजी के सुविचारित नियमन पर बल दिया गया। अन्य बातों के अलावा, इस प्रस्ताव में यह दोहराया गया कि विदेशी सहयोग से जो भी उपक्रम स्थापित किए जाएँगे उन सभी उपक्रमों में भारतीय बहुमत ही होना चाहिए। वर्ष 1949-50 वित्तीय आयोग की नियुक्ति की गई। आयोग ने सिफारिश की कि निम्न दो परिस्थितियों में विदेशी निवेश को स्वीकृति दी जानी चाहिए : एक, उन सार्वजनिक उपक्रमों में जिनमें आयातित पूँजीगत वस्तुओं की आवश्यकता है; तथा दो, उन नए निजी उद्योगों में जिनमें घरेलू उपक्रमी या तो रुचि नहीं रखते या जिनके लिए समुचित तकनीकी जानकारी देश में ही उपलब्ध नहीं है। 6 अप्रैल 1949 को सरकार ने विदेशी पूँजी के संबंध में अपनी नीति की घोषणा की। इसी नीति के महत्त्वपूर्ण सिद्धांतों को अब तक अपनाया गया है। इनमें से कुछ प्रमुख सिद्धांत निम्नलिखित हैं।

i) एक बार विदेशी पूँजी को स्वीकृति प्रदान करने के बाद इसे घरेलू पूँजी के समान दर्जा प्रदान किया जाएगा।

ii) विदेशी पूँजी पर प्राप्त होने वाले लाभों को निवेशकर्ता देश में भेजने की सुविधा प्रदान की जाएगी।

iii) सिद्धांत रूप से एक उद्यम का स्वामित्व एवं प्रभावपूर्ण नियंत्रण भारतीयों के हाथों में होगा।

iv) यदि किसी समय विदेशी उद्यमों का अधिग्रहण या राष्ट्रीयकरण किया जाएगा तो बदले में पर्याप्त और समुचित मुआवज़ा दिया जाएगा।

v) विशेष परिस्थितियों में सरकार कुछ समय के लिए विदेशी पूँजी को पूर्ण नियंत्रण की स्वीकृति दे सकता है लेकिन यह कदम प्रत्येक उद्यम की स्थिति को ध्यान में रखकर ही उठाया जाएगा।

संक्षेप में, सरकार ने यह निश्चय किया कि विदेशी पूँजी के साथ विभेद की नीति को नहीं अपनाया जाएगा। इस पूँजी पर प्राप्त होने वाले लाभों तथा मूल पूँजी को निवेशकर्ता देश में भेजने के लिए स्वतंत्र होंगे। इस बात पर ध्यान दिया गया कि उद्यमों में बड़े पदों पर भारतीयों की नियुक्ति को प्राथमिकता दी जाएगी। उपरोक्त बातों को ध्यान में रखकर पंचवर्षीय योजनाओं में इस प्रकार से विदेशी पूँजी के निवेश व सहयोग को आमंत्रित किया गया ताकि यह राष्ट्रीय लक्ष्यों एवं प्राथमिकताओं के अनुकूल हो। उन विदेशी उद्यमियों को प्राथमिकता प्रदान की जाएगी जोकि पूँजी के साथ तकनीकी ज्ञान की भी व्यवस्था करते हैं।

उपरोक्त सिद्धांतों के अनुसार ही भारत की विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं के अंतर्गत विदेशी पूँजी के संबंध में सरकारी नीति का निर्माण किया गया है। इस संदर्भ में वर्ष 1951 से होने वाली सम्पूर्ण अवधियों को चार भागों में बाँटा जा सकता है।

पहला चरण जोकि वर्ष 1951 से आरंभ की गई प्रथम योजना से शुरू होता है वर्ष 1965 तक चला। इस अवधि में विदेशी पूँजी के प्रति उदार रवैया ही अपनाया गया। देश के औद्योगिक

विकास में योगदान देने के लिए प्रेरित करने के लिए विदेशी पूँजी को अनेक प्रकार की छूट और प्रोत्साहन किए गए।

दूसरा चरण छठे दशक के मध्य से आरंभ होता है। इस चरण में विदेशी पूँजी के प्रति सरकारी नीति में नम्रता की जगह कठोरता ने ली। विदेशी पूँजी के अंतर्वाह पर कड़े नियंत्रण लगा दिए गए। मोटे तौर से नीति यह थी कि विदेशी पूँजी की सीमाएँ सीमित ही रखी जाएँ।

तीसरा चरण सातवें दशक के अंत से आरंभ हुआ। इस दौरान पुनः विदेशी पूँजी की ओर उदारपूर्ण व्यवहार दिखलाया गया। विदेशी प्रत्यक्ष निवेश के अंतर्वाह से अनेक तरह की रुकावटें हटा लीं गईं।

विदेशी पूँजी के प्रति सरकारी नीति का चौथा चरण वर्ष 1991 में अपनाए गए आर्थिक सुधार के कार्यक्रम से आरंभ होता है। नए आर्थिक सुधार कार्यक्रम के अंतर्गत विदेशी निवेशकर्ताओं को सरकार द्वारा अनेक रियायतें और प्रोत्साहन प्रदान किए गए हैं।

## 24.5 नई आर्थिक नीति एवं 1991-1999 के दौरान नीतिगत परिवर्तन

जुलाई 1991 में सरकार द्वारा घोषित औद्योगिक नीति में विदेशी पूँजी निवेश एवं विदेशी टेक्नॉलोजी के स्थानांतरण के संबंध में कई महत्त्वपूर्ण परिवर्तनों के बारे में निर्णय लिए गए हैं। इनमें से कुछ एक प्रमुख का उल्लेख हम इस प्रकार कर सकते हैं : (i) प्राथमिकता प्राप्त उद्योगों में विदेशी पूँजी के अंश पूँजी में 51 प्रतिशत तक प्रत्यक्ष निवेश की स्वीकृति दी जाएगी। (ii) प्रत्यक्ष निवेश के अंतर्वाह से संबद्ध कानूनों और सरकारी व्यवहारों की पुनः इस दृष्टि से जाँच की जाएगी कि यह विदेशी पूँजी के अंतर्वाह में रुकावट न पैदा करें। (iii) अनेक ऐसे विषय और मुद्दे जो विदेशी निवेश के प्रवाह में बाधा बन सकते हैं उनके औचित्य पर पुनः विचार किया गया है। इन मुद्दों में शामिल हैं : विदेशी नागरिकों को घरेलू उपक्रमों में रोज़गार प्रदान करना, विदेशी निगमों को भारत में जायदाद आदि खरीदने की अनुमति देना, विदेशी ब्रांड नामों का भारतीय उत्पादों के लिए प्रयोग, पेटेण्ट अधिकार आदि।

उपरोक्त सभी नीतिगत परिवर्तन इस बात का संकेत देते हैं कि सरकार विदेशी पूँजी निवेश में विशेष रुचि दिखला दे रही है। सरकारी नीति में विदेशी सहायता की अपेक्षा विदेशी निवेश को ओर भारती झुकाव स्पष्ट दिखलाई दे रहा है। इस झुकाव के लिए अनेक कारक जिम्मेदार हैं। पहला, निवेश के रूप में प्राप्त पूँजी पर निश्चित रकम में ब्याज चुकाने की जिम्मेदारी नहीं होती, बल्कि निवेशित पूँजी लाभांश की हकदार होती है और यह तभी मिल पाते हैं यदि सम्बद्ध उपक्रम अपनी कार्यकुशलता के अनुसार लाभ कमा पाते हैं अन्यथा नहीं। दूसरा, निवेशित पूँजी को प्रायः वापिस लौटाया नहीं जाता। वस्तुतः निवेशित पूँजी पर जो लाभांश प्राप्त होते हैं विदेशी निवेशकर्ता इस लाभांश का भी घरेलू उद्योगों में पुनर्निवेश ही कर देते हैं। इस तरह आय के प्रेषण का भी भय निर्मूल ही होता है। तीसरा, विदेशी पूँजी के साथ ही विकसित तकनीक का भी अंतर्वाह होता है। क्रमशः यह तकनीक घरेलू उपक्रमों को भी उपलब्ध हो पाती है। परिणामस्वरूप घरेलू उद्योगों की कार्यकुशलता एवं प्रतिस्पर्धा शक्ति में सुधार होता है। इस प्रकार विदेशी पूँजी स्थायी आर्थिक विकास का सुडौल आधार प्रस्तुत करती है।

### 24.5.1 नई नीति का आलोचनात्मक मूल्यांकन

आर्थिक सुधारों के कार्यक्रमों में विदेशी पूँजी को विशेष प्राथमिकता का दर्जा प्राप्त है। वस्तुतः यह कहने में अतिशयोक्ति नहीं होगी कि आर्थिक कार्यक्रम की सफलता एक बहुत हद तक विदेशी पूँजी की उपलब्धि पर निर्भर करती है। इस संदर्भ में हमें दो बातों पर ध्यान देना होगा : (अ) घरेलू उपक्रमियों की प्रतिक्रिया एवं (ब) विदेशी उपक्रमियों की प्रतिक्रिया।

अ) **घरेलू उपक्रमियों की प्रतिक्रिया (Response of the Domestic Industries)** घरेलू उपक्रमियों के संदर्भ में हमें दो पहलुओं पर ध्यान देना होगा : (i) उपक्रमियों की आशंकाएँ, एवं (ii) संभावित अनुकूल लाभ।

i) उपक्रमियों की आशंकाएँ (Apprehension of Domestic Enterpries) विदेशी पूँजी के प्रति सरकारी उदारता से घरेलू उपक्रमी आशंकित हैं। इसके अनेक कारण हैं :

क) पिछले छः वर्षों के दौरान अनेक विदेशी उपक्रमियों ने स्थानीय उपक्रमियों की साझीदारी में निवेश किए। किंतु जैसे ही उपक्रम की सार्थकता संदेहप्रद प्रतीत हुई उन्होंने संबंध विच्छेद करना ही सरल तरीका समझा। स्थानीय उपक्रम को परिणामस्वरूप भारी झेलनी पड़ी।

ख) कभी-कभी स्थानीय उपक्रम में विदेशी पूँजी ने अल्प-अंश लेना ही स्वीकार किया। किंतु उपक्रम की प्रगति एवं सफलता से मोहित होकर इन्होंने अंशपूँजी में 51 प्रतिशत अथवा अधिक अर्थात् अपने बहुमत होने की माँग पेश कर दी।

ग) यह भी देखा गया कि 51 प्रतिशत बहुमत प्राप्त करने के बाद भी ऐसे ही संयुक्त उपक्रम के समानांतर ही इन्होंने नए नियम का गठन किया जिसमें इन्होंने 100 प्रतिशत पूँजी अपने स्वामित्व में रखीं।

घ) ऐसे मशीनों और उपकरणों को विदेशों से लाया गया जोकि तकनीकी दृष्टि से उन देशों में पुराने और व्यर्थ ठहराए जा चुके थे।

ङ) जल्दी और भारी लाभ कमाने की होड़।

च) उत्पादों के विनिर्माण में इन्होंने रुचि नहीं दिखलाई बल्कि इनका उत्साह बाहर से लाई वस्तुओं की बिक्री में अधिक रहा।

छ) उच्च प्रबंध में भारतीयों की अपेक्षा विदेशियों की नियुक्ति को प्राथमिकता दी गई।

ii) संभावित अनुकूल लाभ (Likely Positive Gains) — **पहला,** विदेशी कम्पनियों के भारत में आने के साथ ही अनेक घरेलू उद्यमियों में नई प्रेरणा जाग्रत हुई है। प्रतिस्पर्धा का डटकर मुकबला करने के लिए उन्होंने लंगोटी कस ली है।

**दूसरा,** अनेक बहु-राष्ट्रीय निगम भी यह समझने लगे हैं कि भारत में अपनी व्यावसायिक क्रियाओं के विस्तार के लिए यह आवश्यक है कि वे स्थानीय उद्यमियों का सहयोग प्राप्त करें। ऐसी परिस्थिति में स्थानीय उद्यमी परस्पर हित में सहयोग पर विचार कर सकते हैं। और लाभांवित हो सकते हैं।

**तीसरा,** विदेशियों के साथ संयुक्त उपक्रमों की स्थापना के साथ ही विकसित तकनीक का अंतर्वाह प्रारंभ हो जाएगा। वैकल्पिक रूप में, विकसित तकनीक प्राप्त करने के लिए भारतीय उपक्रमियों को विदेशी स्रोतों पर निर्भर रहना पड़ता है और बदले में एक मुश्त फीस आदि के रूप में भारी रकम चुकानी पड़ती है।

**चौथा,** बदली हुई परिस्थितियों में यह संभव नहीं प्रतीत होता कि बहु-राष्ट्रीय निगम लाभांश आदि के रूप में अर्जित अपनी राय को वापिस अपने देश में प्रेषण करने में उत्साहित होंगे। बदलते परिवेश में जब प्रतिस्पर्धा का बोल-बाला है किसी भी उत्पादक के लिए यह आवश्यक है कि वह अर्जित अतिरेकों का पुनर्निवेश करे। बहु-राष्ट्रीय निगमों से भी यही अपेक्षा की जाती है और यदि ऐसा होता है तो परिणामतः निवेश की राशि में हुई वृद्धि से घरेलू उपक्रमी भी लाभांवित होंगे।

**अंततः,** हालाँकि यह स्पष्ट है कि अभी तक विदेशी कम्पनियों ने प्रमुखतः तेज बिकने वाली उपभोक्ता वस्तुओं के उत्पादन में ही अधिक रुचि दिखलाई है, किंतु इस बात से भी इंकार नहीं किया जा सकता कि उच्च-तकनीकी क्षेत्र एवं उपरिढाँचे की ओर भी विदेशी पूँजी का प्रवाह जारी है। इन क्षेत्रों में किए जाने वाले निवेश से अपेक्षित लाभ कुछ समय बाद ही उजागर होंगे तत्काल नहीं। इसी तरह कारों, टिकाउ उपभोक्ता वस्तुओं, सफेद वस्तुओं आदि विलासिता क्षेत्र में किए जाने वाले निवेश में भी न केवल हमारे निर्यातों की संभावनाएँ बढ़ती हैं बल्कि इनके उत्पादन से एक बड़ी मात्रा में नए रोज़गार के अवसरों की उत्पत्ति होती है। इन सबके सुखद और अनुकूल परिणाम ही सामने आने चाहिए।

आ) **विदेशी पूँजी की प्रतिक्रिया (Response of the Foreign Capital)** – नई नीति के प्रति विदेशी पूँजी की प्रतिक्रिया उतनी उत्साहवर्धक नहीं रही है जितनी कि मूलतः अपेक्षित थी जैसा कि निम्न तालिका से स्पष्ट होता है :

**तालिका-1 : विदेशी प्रत्यक्ष निवेश का अंतर्वाह**

($ मिलियन)

| वर्ष | स्वीकृति | वास्तविक अंतर्वाह |
|---|---|---|
| 1991 | 325 | 155 |
| 1992 | 1781 | 233 |
| 1993 | 3559 | 574 |
| 1994 | 4332 | 958 |
| 1995 | 11245 | 2100 |
| 1996 | 11142.0 | 2383 |
| 1997 | 15752.0 | 3330 |

तालिका-1 से निम्न बातें स्पष्ट होती हैं :

i) पिछले छः वर्षों के दौरान भारत सरकार द्वारा स्वीकृत विदेशी निवेश प्रस्तावों में निरंतर वृद्धि जारी है।

ii) वास्तविक अंतर्वाह जोकि प्रारंभिक चरण में मात्र बूँद-बूँद में आ रहे थे अब क्रमशः अपेक्षाकृत कुछ तेज गति से आ रहे हैं हालाँकि इनकी गति अभी बहुत धीमी है।

iii) गति कितनी धीमी है इस बात का अनुमान ऐसे लगाया जा सकता है कि पिछले छः वर्षों के दौरान किए गए अथक प्रयासों के परिणामस्वरूप वर्ष 1997 में लगभग $3.1 बिलियन मूल्य की विदेशी पूँजी प्रत्यक्ष निवेश के रूप में भारत पहुँची जबकि पड़ौसी देश चीन में पिछले 10 वर्षों में निरंतर $20 बिलियन मूल्य का निवेश प्रतिवर्ष होता रहा है।

उपरोक्त वर्णन से स्पष्ट है कि विदेशी पूँजी के मार्ग में अभी कुछ रुकावटें हैं जिनकी ओ ध्यान देना होगा और जिन्हें पार करना होगा। इन रुकावटों में से कुछ प्रमुख निम्नलिखि हैं :

**पहला,** विदेशी निवेशकर्ताओं के दृष्टिकोण से भारत में हाल ही में किए गए नीतिगत परिवर्तनों के कारण जो परिवेश उत्पन्न हुआ है वह पुराने परिवेश से कितना भिन्न है कोई विशेष महत्त्व नहीं रखता है। विदेशी पूँजी तो एक प्रवाह है जोकि उस ओर बह जाएगा जहाँ ढलाव इसके अधिक अनुकूल है। अर्थात् विदेशी निवेशकर्ता तो इस बात में अधिक रुचि रखते हैं कि क्या भारतीय परिवेश अन्य प्रतियोगी देशों की तुलना में उनके लिए बेहतर है अथवा नहीं। यदि भारतीय परिवेश उनके लिए बेहतर है तभी विदेशी पूँजी का बहाव भारत की ओर होगा अन्यथा नहीं।

भारतीय परिवेश पर यदि हम दृष्टि डालें तो विदेशी पूँजीपतियों के दृष्टिकोण से हमें दो गुण दिखलाई देते हैं। एक भारत में मजदूरी दरें अर्थात् श्रम की लागत अपेक्षाकृत कम है, तथा दो, भारत में विस्तृत घरेलू बाज़ार की संभावनाएँ हैं। इन दोनों गुणों से विदेशी निवेशकर्ता लाभांवित हो सकते हैं।

परंतु जब हम निम्न मजदूरी दरों की बात करते हैं तो हम इस तथ्य को नहीं भुला सकते कि भारतीय श्रमिकों की उत्पादकता भी अपेक्षाकृत नीची है। उदाहरणस्वरूप, इस बात के बावजूद कि पिछले 45 वर्षों के दौरान श्रम उत्पादकता में बहुत सुधार हुआ है वर्ष 1990 में औसतन भारतीय श्रमिकों द्वारा प्रति व्यक्ति 3,261 मूल्य का उत्पादन किया गया जोकि श्रीलंका, पाकिस्तान, बांग्लादेश और फिलिपींस आदि देशों में उत्पादित मात्रा से भी कहीं कम था। श्रमिकों की उत्पादकता बहुत कुछ उपलब्ध औद्योगिक संबंधों से भी प्रभावित होती है। इस संदर्भ में उपलब्ध परिस्थितियों को बहुत अनुकूल नहीं समझा जा सकता।

भारत का विस्तृत घरेलू बाज़ार निःसंदेह निवेशकर्ता को आवश्यक प्रोत्साहन प्रदान करता है। किंतु, नई नीति के अंतर्गत कुछ शर्तें ऐसी हैं जो विदेशी निवेशकर्ता को हतोत्साहित करती हैं। उदाहरणस्वरूप, विदेशी निवेशकर्ता अर्जित लाभांश को केवल उसी परिस्थिति में अपने देश में प्रेषित कर सकता है जब वह बराबर मूल्य की विदेशी मुद्रा अर्जन करता है। अर्थात् विदेशी उपक्रमियों को मात्र घरेलू बाज़ार के प्रलोभन में ही नहीं पड़ना होगा बल्कि उन्हें भारत में उत्पादित सामान का विदेशों को निर्यात करना होगा। भारत की वर्तमान परिस्थितियों में यह कार्य सरल नहीं लगता। इसके लिए विदेशी उपक्रमियों को अथक परिश्रम करना होगा। विदेशी बाज़ारों में अपनी प्रतिस्पर्धा बनाए रखने के लिए उपक्रमियों के लिए यह आवश्यक होगा कि वे विकसित तकनीक, उपकरणों और कच्चे माल का आयात करें। वे ऐसा करते हैं तो उनकी उत्पादन लागत बढ़ती है। पुनः प्रतिस्पर्धा का प्रश्न सामने आ खड़ा होता है।

**दूसरा,** नई नीति के अंतर्गत विदेशी पूँजी के लिए भारत में प्रवेश के लिए तो दरवाजे खुले छोड़ दिए गए हैं किंतु वर्तमान नीति के अंतर्गत भारत में निवेश की नई पूँजी को वापिस ले जाने के प्रावधान स्पष्ट नहीं हैं। अर्थात् भारत सरकार एक समुचित निकास नीति (Exit Policy) का निर्माण अब तक नहीं कर पाई है। सरकार इस तरह की नीति के निर्माण पर विचार तो कर रही है किंतु, अब तक ऐसी नीति की स्पष्ट रूपरेखा सामने नहीं आती, विदेशी निवेशकर्ता में उत्साह का अभाव दिखना स्वाभाविक है।

**तीसरा,** यद्यपि विदेशी निवेशकर्ता सरकार की आर्थिक सुधार कार्यक्रम में आस्था के प्रति तो आश्वस्त हैं किंतु सरकारी कार्यालयों में क्या उनके साथ वैसा ही व्यवहार किया जाएगा और

उतनी कार्यकुशलता का परिचय दिया जाएगा। जैसाकि उन्हें अपने देश अथवा कुछ अन्य चुने हुए विकासशील देशों में प्राप्त होता है इस बारे में वे चिंतायुक्त हैं। इस दिशा में कारगर कदम उठाने की आवश्यकता है अन्यथा लालफीताशाही समस्त कार्यक्रम को उलट-पुलटकर छोड़ देगी।

**अंततः,** विदेशी निवेशकर्ता इस बारे में भी आश्वस्त होना चाहेंगे कि भारत द्वारा जो तुलनात्मक लाभ प्रस्तुत किए जा रहे हैं वे भारत में पाई जाने वाली तुलनात्मक लागतों से कम तो नहीं है। विदेशी उपक्रम भारत में रहन-सहन की दशा का अध्ययन करना चाहेंगे। वे यह भी जानना चाहेंगे कि उनके द्वारा किए जाने वाले उत्पादन के लिए आवश्यक मध्यवर्ती वस्तुएँ घरेलू बाज़ारों में उपलब्ध होंगी। विदेशी उपक्रमी संचार, टेलीफोन, ऊर्जा आदि प्राथमिक सेवाओं की सुलभता के बारे में भी आश्वस्त होना चाहेंगे।

संक्षेप में, विदेशी पूँजी के आगमन का हम फूलों से स्वागत करने की प्रतीक्षा में हैं तो लेकिन पहले हमें इस रास्ते में बीछे काँटों को हटाने के प्रयास करने होंगे।

**बोध प्रश्न 3**

1) निम्न में से सही कथन का चयन करें :

   i) भारत में विदेशी पूँजी के प्रवेश को कभी अनुमति नहीं दी गई। ( )

   ii) वर्ष 1991 के बाद से सभी विदेशी नागरिक भारत में किसी भी तरह की उत्पादन इकाई लगाने के लिए पूरी तरह से स्वतंत्र हैं। ( )

   iii) विदेशी विनिमय नियमन एक्ट, 1973 केवल विदेशियों पर लागू होता है, भारतीयों पर नहीं। ( )

   iv) विदेशी पूँजी की ब्याज भुगतानों के रूप में निरंतर सेवा करने की आवश्यकता होती है। ( )

2) भारत में विदेशी पूँजी के प्रति अपनाई गई नीति के चार प्रमुख सिद्धांत बतलाएँ।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

## 24.6 सारांश

भारत में जिस तरह की विकास युक्ति अपनाई गई यह ही था कि हम उत्तरोत्तर बढ़ती मात्रा में विदेशी वित्तीय संसाधनों का प्रयोग करें। आयोजन के प्रथम चार दशकों में विदेशियों से ऋणों के माध्यम वित्तीय संसाधन प्राप्त करने को हमने प्राथमिकता दी। विदेशियों द्वारा भारत में निवेश करने की ओर हमने कड़ा रुख ही अपनाया। किंतु, इस प्रकार की नीति अपनाने के परिणामस्वरूप हमारे ऊपर ऋणग्रस्तता का बोझ निरंतर बढ़ता गया। सन् 1991

में अपनाए गए आर्थिक सुधार कार्यक्रम के अंतर्गत हमारे विदेशी पूँजी के प्रति व्यवहार में भी परिवर्तन आया। परिणामतः अब हम ऋणों की अपेक्षा निवेश के रूप में विदेशी पूँजी की प्राप्ति की ओर अधिक उत्साह दिखला रहे हैं और इस प्रवाह को आवश्यक प्रोत्साहन दे रहे हैं।

## 24.7 शब्दावली

**बचत अंतराल** : उपलब्ध घरेलू बचत की मात्रा का अपेक्षित निवेश राशि से कम होना।

**विदेशी विनिमय अंतराल** : उपलब्ध विदेशी विनिमय राशि का विकास कार्यक्रमों की आवश्यकताओं की तुलना में अपर्याप्त होना।

**तकनीकी अंतराल** : देश में घरेलू तकनीक का स्तर विकसित देशों में प्रचलित तकनीक के स्तर से नीचा होना।

**पत्राधान निवेश** : निगमीय क्षेत्र द्वारा जारी अंशपत्रों, बॉण्डों एवं डिम्बेचरों की खरीद पर किया जाने वाला खर्च।

**बहु-राष्ट्रीय निगम** : वे निगम जो एक से अधिक देशों में उत्पादन इकाइयाँ स्थापित करते हैं और आर्थिक संव्यवहार करते हैं।

**राष्ट्रीयकरण** : सरकार द्वारा निजी पूँजी और उपक्रम से संचालित उत्पादन इकाइयों का अधिग्रहण।

## 24.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

Vijay Joshi and I.M.D. Little : Indias Economic Reforms 1991-2001.

Reserve Bank of India : Report on Currency and Finance.

भारत सरकार : आर्थिक सर्वेक्षण

## 24.9 बोध प्रश्नों के उत्तर अथवा दिशा-संकेत

**बोध प्रश्न 1**

1) उपभाग 24.2.1 देखिए।

2) उपभाग 24.2.2 देखिए।

**बोध प्रश्न 2**

1) भाग 24.3 में पहला भाग देखिए।

2) उपभाग 24.3.1 देखिए।

3) उपभाग 24.3.3 देखिए।

4) उपभाग 24.3.4 देखिए।

**बोध प्रश्न 3**

1) दिए हुए कथनों में से कोई भी कथन नहीं है।

2) उपभाग 24.4.1 देखिए।